सुन क्रोध करने लगा और बोला कि, जहां देवकी स्थित है तहां अभी जा ॥ २६ ॥ वह (द्वारपाल) वहां गया और देव
कीको देख यह वाक्य बोला कि, हे भगिनी ! तू किस कारण यहां आई है सो कह ॥ २७ ॥ दैत्येन्द्रभृत्यसे
इस प्रकार उक्त देवकी बोली कि; मैं जलके लिये यहां आई हूं मेरे घरमें पानी नहीं है ॥ २८ ॥ इस प्रकार

तेनैव देवकी दृष्टा वाक्यमेतदुवाच ह ॥ किमर्थं हि भगिन्यत्र आगतासि च तद्वद ॥ २७ ॥
इत्युक्ता कंसभृत्येन देवकी वाक्यमब्रवीत् ॥ आगताहं जलार्थं च पानीयं नास्ति मे गृहे
॥ २८ ॥ इत्युक्त्वा देवकी तं तु गृहे तत्र समागता ॥ आगत्य स्वगृहे कंसः प्रतीहारमथा-
ब्रवीत् ॥ २९ ॥ रक्षितव्या स्वसा चैव स्वगृहाभ्यंतरे स्थिता ॥ स्वयमेव ततो रक्षां तस्याः
कारयते हि सः ॥ ३० ॥ गृहमध्ये स्वसाक्षिप्ता तालकैरपि यंत्रिता ॥ दैत्या निवेशिता
द्वारे शूलमुद्गरपाणयः ॥ ३१ ॥

उससे कह देवकी घरमें आई फिर कंस अपने घरमें आकर प्रतीहारसे बोला ॥ २९ ॥ अपने घरके भीतर
स्थित हुई भगिनीकी तू रक्षा कर और वह स्वयंभी उसकी रक्षा करता रहा ॥ ३० ॥ घरमें भगिनीको प्रवेश

कराके ताले कुंजी लगाकर शूल मुद्गर हाथमें लिये दैत्योंको द्वारपर स्थापित किया ॥ ३१ ॥ इस प्रकार देवकीको बंद कर निज मंदिरको गया और इस प्रकार देवकीकी रक्षा करता कि, वह रात दिन नहीं सोता था ॥ ३२ ॥ सूर्यके सिंहराशिपर स्थित होनेपर, आकाशके मेघोंसे आच्छादित होजानेपर भाद्रपदकी कृष्णपक्षकी

एवं निवेशयित्वा तु गतो विजयमंदिरे ॥ न सुप्यति दिवारात्रावेवं रक्षति देवकीम् ॥ ३२ ॥
सिंहराशिगते सूर्ये गगने जलदाकुले ॥ मासि भाद्रपदेऽष्टम्यां कृष्णपक्षेऽर्धरात्रके ॥ ३३ ॥
शशांके वृषराशिस्थे नक्षत्रे रोहिणीबुधे ॥ योगे सौभाग्यसंयुक्ते अर्धरात्रे विधूदये ॥ ३४ ॥
अधरात्रान्तरादूर्ध्वं घटिकापि यदा भवेत् ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तं फलं प्राप्नोति नान्यथा ॥ ३५ ॥

अष्टमीके अर्धरात्रिमें ॥ ३३ ॥ चन्द्रमाके वृषराशिपर स्थित होनेपर, रोहिणीनक्षत्र बुधवार सौभाग्ययोगसे युक्त अर्धरात्रिमें चंद्रमाके उदय होनेपर ॥ ३४ ॥ आधी रातके बाद एक घडी होनेपर जब श्रुति स्मृति तथा

पुराणोंमें कहा हुआ फल मिलता है ॥ ३५ ॥ ऐसे विजय नामक मुहूर्तमें हे महेन्द्र ! श्रीकृष्णजीका जन्म हुआ। कृष्णजीके प्रतापसे उसी समय द्वार खुल गया ॥ ३६ ॥ उस समय अस्त्र हाथमें लिये दरवाजेपर

कृष्णजन्म महेंद्राऽभून्मुहूर्त्ते विजयाभिधे ॥ कृष्णप्रतापतो द्वारं प्रमुक्तं तत्क्षणादभूत् ॥ ३६ ॥ मूर्छां गतास्तदा दैत्या द्वारस्था अस्त्रपाणयः ॥ उत्थितो वसुदेवश्च देवक्याः पुरतस्तदा ॥ ३७ ॥ उवाच देवकी चाथ भर्त्तारं प्रति सत्वरम् ॥ उत्तिष्ठ व्रज भो स्वामिन्पुत्रमादाय गोकुलम् ॥ ३८ ॥ नंदगोपकुले रम्ये यशोदायै ददस्व च ॥ यशोदायाः सुता जाता तदर्थं यादवोत्तम ॥ ३९ ॥

स्थित हुए दैत्य मूर्च्छित हो गये और वसुदेवभी देवकीके आगेसे उठे ॥३७॥ तब देवकी स्वामीसे बोली कि, हे स्वामिन् ! शीघ्र उठो, पुत्रको लेकर गोकुल जाओ ॥३८॥ नंदजीके मनोहर घरमें यशोदाके लिये श्रीकृष्णजीको

दे आओ ॥ ३९ ॥ इसके बाद वसुदेवजी स्वयं यत्नपूर्वक पुत्रको ले अधिक जलसे पूर्ण यमुनाजीके मार्गको गये ॥ ४० ॥ उन (यमुनाजी) को जलसे पूर्ण देख वसुदेवजी आश्चर्ययुक्त मधुर वचन बोले कि मानो यहां मेरी मृत्यु हुई ॥ ४१ ॥ यहां पुत्रका संदेहभी है इस प्रकार वारंवार मनमें विचार कर उनने यमुनाके प्रवाहमें

ततस्तु देवकीभर्त्ता पुत्रमादाय यत्नतः ॥ यमुनायां गतो मार्गे पूर्णायां बहुभिर्जलैः ॥ ४० ॥
तां दृष्ट्वा जलसंपूर्णां वसुदेवः सुविस्मितः ॥ उवाच मधुरं वाक्यं मम मृत्युरभूदिह ॥ ४१ ॥ पुत्र-
स्यापि च संदेह इहाद्य समुपस्थितः ॥ इति संचिंत्य बहुधा प्रविष्टो यमुनाह्रदे ॥ ४२ ॥ कृष्णां-
घ्रिस्पर्शनादेव सरिदल्पजला ह्यभूत् ॥ क्षणमात्रं गता तत्र स्वल्पत्वं यमुना नदी ॥ ४३ ॥
ततः स गोकुले गत्वा नंदस्य गृहसंनिधौ ॥ यथा चापि तया प्रोक्तं बालकश्च समर्पितः ॥ ४४ ॥

प्रवेश किया ॥ ४२ ॥ पर श्रीकृष्णजीके पादके स्पर्शसे यमुनानदी थोडे जलवाली हुई, क्षणमात्रमें यमुनाजी अल्प जलको प्राप्त हुई ॥ ४३ ॥ तब वसुदेवजी गोकुलमें नंदजीके गृहके निकट जाकर जिस प्रकार देवकीने

कहा था तैसेही बालकको अर्पण किया ॥ ४४ ॥ अपने वाक्यको पालन करनेवाले (वसुदेवजी) उस (यशोदा) को पुत्र देकर फिर कन्याको लेकर शीघ्र लौट आये ॥ ४५ ॥ पूर्वकी समान यमुनाको लांघ मथुरामें आये और उन्होंने देवकीको वह कन्या सौंपी ॥ ४६ ॥ तदनंतर प्रातःकाल वे सब दैत्य अपने

तस्यै दत्त्वा तु पुत्रं च स्ववाक्यं प्रतिपालयन् ॥ पुनरेव समायातः कन्यामादाय सत्वरम् ॥४५॥
पूर्ववद्यमुनां लंघ्य मथुरायां समागतः ॥ देवक्याश्च ततः कन्या भर्त्रा तेन समर्पिता ॥ ४६ ॥
ततः प्रभाते सर्वे ते उत्थिता दानवाश्च ये ॥ क्रोधमासाद्य कंसोऽयं प्रतीहारमथाब्रवीत् ॥४७॥
देवक्यामद्य किं जातं ततो मम निवेदय ॥ इति श्रुत्वा प्रतीहारो देवक्याः पुरतो गतः ॥४८॥
दृष्टा कन्या तदा तेन रुदती च मुहुर्मुहुः ॥ निवेदिताथ दैत्याय कन्या जातातिशोभना ॥ ४९ ॥

स्थानसे उठे तब क्रोधको प्राप्त हो कंस द्वारपालसे बोला ॥ ४७ ॥ आज देवकीके क्या उत्पन्न हुआ सो मुझसे निवेदन कर । द्वारपाल यह सुन देवकीके आगे गया ॥ ४८ ॥ उसने वारंवार रोती हुई कन्याको देखकर

दैत्यसे निवेदन किया कि, अपनी भगिनीको अतिश्रेष्ठ कन्या उत्पन्न हुई है ॥ ४९ ॥ हे राजन् ! आप आज्ञा देनेको योग्य हो. तब कंस क्रोधयुक्त हो द्वारपालसे बोला कि ॥ ५० ॥ कौलक नामक धोबीको यह कन्या देदे, दुष्टात्मा प्रतिहारने यह काम शीघ्रही किया ॥ ५१ ॥ उस धोबीने कन्याको हाथमें ले शिला (पटले) पर

तव स्वसरि भो राजन्नाज्ञां संदातुमर्हसि॥कंसः कोपसमाविष्टः प्रतीहारमथाब्रवीत्॥५०॥ कौलको नाम रजकस्तस्मै कन्यां प्रयच्छतु ॥ प्रतीहारेण तत्कर्म कृतं शीघ्रं दुरात्मना ॥५१॥ धृत्वा करतले कन्यां शिलायां प्राक्षिपद् द्रुतम् ॥ सा च कन्या हरेर्माया बाहुमुत्पाट्य खे गता ॥५२॥ अन्तरिक्षगता वाक्यं विद्युद्रूपाब्रवीत्तदा ॥ बालको विद्यते तत्र नंदगोपगृहे वरे ॥५३॥ तस्मान्मृत्युश्च दैत्यस्य कंसाख्यस्य भविष्यति ॥ कृष्णरूपी जगन्नाथः स एव हि न संशयः ॥५४॥

ताडन की तब वह विष्णुकी मायारूपी कन्या पाटसे उछल आकाशको गई ॥ ५२ ॥ और आकाशमें विद्युद्रूप (बिजली) होकर वह कन्या बोली कि, वह बालक उस नदंगोपके घरमें है ॥ ५३ ॥ उसीसे कंसदैत्यकी

मृत्यु होगी कारण कि, वह कृष्णरूपी जगत्पति है इसमें संशय नहीं ॥ ५४ ॥ मैं उन जगद्गुरुकी वैष्णवी नामक माया हूं इस प्रकार कह वह कन्या स्वर्गको गई और यह वाणी कंसने सुनी ॥ ५५ ॥ और अधिक क्रोधाभिभूत हो उसने नंदगोपके यहां उसके मारनेके लिये मृत्युकी समान एक स्त्री (दूध पिलानेवाली)

अहं च वैष्णवी नाम तस्य माया जगद्गुरोः ॥ इत्युक्त्वा सा गता स्वर्गं कंसस्तु श्रुतवान् गिरम् ॥ ५५ ॥ अतीव क्रोधसंविष्टो नंदगोपगृहे वरे ॥ तेन स्त्री प्रेषिता तस्य वधार्थं मृत्युसन्निभा ॥ ५६ ॥ गता सा बालकायैव स्तनदानं चकार ह ॥ बालो न मुंचते तां तु कृष्णकृष्णेति साकरोत् ॥ ५७ ॥ मोचिता च तदा तेन विह्वला सा तदाभवत् ॥ ततः सा पुनरायाता यत्रासौ दानवेश्वरः ॥ ५८ ॥

भेजी ॥ ५६ ॥ वह स्त्री जाकर उस बालकको स्तन पिलाने लगी और जब उस बालकने उसे नहीं छोडा तब वह उसे हे कृष्ण ! हे कृष्ण ! ऐसे पुकारने लगी ॥ ५७ ॥ तब उस बालकने स्तन छोडा तो वह व्याकुल हो गई

और जहां वह दानवेश्वर कंस था तहां लौट आई ॥ ५८ ॥ और अपना तथा श्रीकृष्णजीका वृत्तान्त निवेदन कर बोली कि, हे कंस ! वह बालक नहीं किन्तु भुवनेश ईश्वर है ॥ ५९ ॥ फिर दुष्ट कंसने एक दुर्धर्ष ब्राह्मण भेजा वह श्रीकृष्णजीके मारनेके लिये उसके निकट गया ॥ ६० ॥ उस ब्राह्मणको नंदगोपकी पत्नी

निवेदयित्वा वृत्तांतमात्मीयं च हरेस्तदा ॥ नैव कंस शिशुः सोऽपि भुवनेशः स ईश्वरः ॥ ५९ ॥ ततः कंसेन दुर्धर्षो ब्राह्मणः प्रेषितस्तदा ॥ वधार्थं वासुदेवस्य गतस्तस्यैव संनिधौ ॥ ६० ॥ स दृष्टो ब्राह्मणः पत्न्या नंदगोपस्य चागतः ॥ उवाच ब्राह्मणं तं च मम पुत्रोऽत्र विद्यते ॥ ६१ ॥ तस्य रक्षा त्वया कार्या गृहस्य च तथा द्विज ॥ पानीयार्थं गमिष्यामि तडागेऽत्राब्रवीत्तु तम् ॥ ६२ ॥

(यशोदा) ने आते देखा और उस ब्राह्मणसे बोली कि, यहां मेरा पुत्र है ॥ ६१ ॥ हे ब्राह्मण ! उसकी तथा मेरे घरकी रक्षा तुम करो मैं जल लानेके लिये सरोवरपर जाती हूं इस प्रकार उससे बोली ॥ ६२ ॥

इसके पश्चात् वह ब्राह्मण उस बालकको मारने लगा तो श्रीकृष्णजीने उसके मुखको दहीके पात्रमें डाल दिया फिर उसने अपने मुखको बाहर निकाला ॥ ६३॥ इसके पश्चात् नन्दपत्नी आकर ब्राह्मणको अपने मुखको दहीके पात्रसे निकालता हुआ देखकर क्रोधसे उस ब्राह्मणको बोली ॥ ६४ ॥ यह तुमने क्या किया जो दही पान

ततः स बालकं हन्ति तद्वक्त्रं दधिभाजने ॥ प्राक्षिप्तं वासुदेवेन ततो वक्त्रं निकृष्टवान् ॥ ६३ ॥ नन्दपत्नी ततो याता दृष्ट्वा ब्राह्मणवक्त्रकम् ॥ दधिभांडे तु कोपेन ब्राह्मणं प्रति साब्रवीत् ॥ ६४ ॥ किं कृतं भवता चैव दधिपानं च यत्कृतम् ॥ तुभ्यं किंतु न दास्यामि दधि निष्कासितं ततः ॥ ६५ ॥ आगत्य च द्विजः कंसं न चासौ बालको हरिः ॥ त्रैलो- क्यनाथो भगवाञ्ज्ञातव्यो नात्र संशयः ॥६६॥ कंसं त्वामेव भगवान्वधिष्यति न संशयः ॥ एवं हि बहवस्तेन ह्युपाया देवनायक ॥ ६७ ॥

कर लिया तुझे अब मैं कुछभी नहीं दूंगी जिससे कि, तूने दही निकाल लिया ॥ ६५ ॥ फिर ब्राह्मण कंसके समीप आकर बोला कि, वह बालक नहीं है किन्तु उसे त्रिलोकीनाथ भगवान् जानो, इसमें सन्देह मत करो ॥६६॥ तुझ कंसको

वह भगवान् कभी न कभी मारेगा इसमें कुछभी संशय नहीं है। इस प्रकार उस कंसने हे देवनायक इन्द्र! कृष्णवधके निमित्त बहुतेरे उपाय किये ॥ ६७ ॥ उसकी मृत्यु किस प्रकार होय इस प्रकार वह मूर्ख कंस उसके मारनेके लिये विचार करताथा ॥ ६८ ॥ एक समय कंससे पूजित केशिनामक दैत्य

कृताः कृष्णवधार्थाय तस्य मृत्युः कथं भवेत् ॥ इति संचिंत्य वै कंसस्तद्वधार्थं तु मूढधीः ॥ ६८ ॥ केशिदैत्योऽश्वरूपेण प्रेषितः कंसपूजितः ॥ कृष्णेनारुह्य संपीड्य केशी प्राणैर्वियोजितः ॥ ६९ ॥ अरिष्टः प्रेषितस्तेन वृषरूपो महासुरः ॥ गत्वा निकेतने रम्ये यत्रास्ते शिशुरूपधृक् ॥ ७० ॥ युध्यमानं ततस्तं तु वृषयोरंतरे हरिः ॥ कृष्णो विभज्य शृंगे चारिष्टं तं हतवान् क्षणात् ॥ ७१ ॥

अश्वरूपसे भेजा गया श्रीकृष्णजीने उसपर चढके ताडन कर उस केशीको प्राणोंसे अलग कर दिया याने मारडाला ॥ ६९ ॥ फिर उस (कंस) ने बैलके रूपमें अरिष्टनामक महाअसुर भेजा वह उस रमणीय निकेतनके समीप गया जहां बालकरूप (कृष्ण) था ॥ ७० ॥ तब वह हरि दोनों बैलोंके मध्यमें युद्ध करता हुआ और

उसने अरिष्टदैत्यके शृंगों (सींगों) को तोडके उसी समय उस अरिष्टदैत्यको मार डाला ॥ ७१ ॥ फिर कंसने काल नामक दैत्य काकके रूपमें भेजा वह चार प्रकारसे मृत्यु करनेवाला भगवान् श्रीकृष्णजीके निकट आया ॥ ७२ ॥ तब श्रीकृष्णने उस काकको ग्रहण किया तथा उसका गला मसल उसके पंख हाथोंसे उखाड दिये

कालाख्यः काकरूपेण प्रेषितो दानवेन च ॥ कृष्णपार्श्वे समायातो हरेश्चतुर्विधान्तकृत् ॥ ७२ ॥ काकोऽपि गृह्य कृष्णेन गले संमर्दितस्तदा ॥ पक्षौ कराभ्यामुत्पाट्य कालाख्यः क्षपितस्तदा ॥ ७३ ॥ कथं मृत्युर्भवेत्तस्य कृष्णाख्यबालकस्य हि ॥ एवं संचिंत्य बहुधा प्रतीहारमथाब्रवीत् ॥ ७४ ॥ नंदमानय क्षिप्रं त्वं गत्वा तत्र ममाज्ञया ॥ इति श्रुत्वा प्रतीहारो ह्यानयामास नंदकम् ॥ ७५ ॥

तब काल नामक दैत्य गिर पडा ॥ ७३ ॥ पुनः उस कृष्णनामक बालकका किस प्रकार मृत्यु होय इस प्रकार विशेष विचार करता हुआ कंस द्वारपालसे बोला ॥ ७४ ॥ त शीघ्र जा और मेरी आज्ञासे नंदको यहां बुला

ला यह सुन प्रतिहारोंने नंदको बुला लाया ॥ ७५ ॥ तब उन नंदके लिये कंसने आज्ञा दी कि, पारिजातपुष्प-को लाओ नहीं तो तुम्हें मार डालूंगा और यह मेरा मत निश्चित है ॥ ७६ ॥ नंदजी 'बहुत अच्छा ऐसाही होगा' ऐसा कह घरको गये और उन्होंने अपनी स्त्रीके आगे सब निवेदन किया ॥ ७७ ॥ इस बातको कृष्ण-

ततस्तस्मै ददौ चाज्ञां पारिजातं समानय ॥ अन्यथा त्वां हनिष्यामि इति मे निश्चिता मतिः ॥ ७६ ॥ एवमस्त्विति तेनोक्तं गतोऽथ स्वगृहे तदा ॥ एवं निवेदितं तेन भार्यायाः पुरतस्तदा ॥७७॥ एवं च श्रुतवान्कृष्णः क्रीडन्स बालकैः सह ॥ आदाय गेंदुकं कृष्णो यमुनायामथाक्षिपत् ॥ ७८ ॥ पारिजातकपुष्पार्थं गेंदुकार्थमिषांतरे ॥ कदंबतरुमारुह्य पतितो यमुनां हरिः ॥ ७९ ॥ स तदा पतितस्तत्र पतत्येव यदा गतः ॥ यत्र तिष्ठति नागेंद्रः कालियो नाम विश्रुतः ॥ ८० ॥

जीनेभी सुन लिया और बालकोंके साथ खेलते हुए उस कृष्णने गेंद ले यमुनामें फेंक दी ॥ ७८ ॥ और पारि-जातक पुष्पोंके लिये गेंदके लानेके बहानेसे श्रीकृष्णजी कदम्बके वृक्षपर चढकर यमुनाजीमें कूदपडे ॥ ७९ ॥ और गिरतेही तहां गये कि जहां कालियानामक विख्यात सर्पराज स्थित था ॥ ८० ॥